Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor:3.021 website: www.researchguru.net
Volume-12, Issue-2, September-2018

वर्तमान सदी की कवयित्रियों की रचनाओं में संवेदना, सामाजिक सरोकार एवं सृजनात्मक चिंतन

डॉ0 मृदुल जोशी[1]
श्वेता अग्रवाल[2]
[1]डॉ0 मृदुल जोशी, असिस्टेन्ट प्रोफेसर (हिन्दी विभाग), कन्या गुरुकुल परिसर, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
[2]शोधछात्रा (हिन्दी विभाग), गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

सारांश –

अनुभूति, किसी व्यक्ति के अन्तर्मन में उठी भावना है जो उसे कुछ करने के लिए प्रेरित करती है। यह सामाजिक सरोकारों और संवेदनशील ह्रदय का स्पर्श है।

वर्तमान सदी के जिस वातावरण में कविता–सृजन हो रहा है वह अत्यन्त ही चुनौतीपूर्ण समय है। इस समय कविता का संकट आंतरिक नहीं, बाहरी अधिक है इसलिए अपने परिवेश और वातावरण के प्रति जैसी जागरुकता और सजगता आज है, वैसी पहले नहीं थी। वर्तमान सामाजिक–पारिवारिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में जो विषमताएँ उत्पन्न हुई हैं उसने मानवीय संवेदनाओं को हिलाकर रख दिया है।

आज की कविता वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक–व्यवस्था पर कठोर प्रहार करती है साथ ही बढ़ते साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, अराजकता को बड़ी ही ईमानदारी से अनुभव कर इन कवयित्रियों ने वास्तविकता के साथ कविताओं में प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत शोधपत्र में वर्तमान सदी की कवयित्रियों की रचनाओं में संवेदना, सामाजिक सरोकार एवं सृजनात्मक चिंतन को स्पष्ट करने का प्रयास करूँगी।

1 संवेदना–किसी की वेदना देखकर स्वयं भी कुछ उसी प्रकार की वेदना का अनुभव करना।

2 सामाजिक सरोकार–समाज से संबंधित

3 सृजनात्मक चिंतन–नए दृष्टिकोण, विचार और व्यवहार अपनाने के लिए सदा तत्पर रहना।

साहित्य और सामाजिक–जीवन में घनिष्ठ एवं अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। कवि जिस समाज में रह रहा होता है अपने काव्य में उसी को प्रभावशाली ढंग से संप्रेषित करता है जो पाठक को और समाज को प्रभावित कर सके। अतः कहा जा सकता है कि साहित्य, समाज की छाया है। वर्तमान समय में मानवीय समाज का चेहरा पूर्णतया बदल–सा गया है। संतोष–असंतोष, प्यार–नफरत, भय–निडरता, सुख–दुःख, आक्रोश–कायरता के मिले–जुले भावों को एक साथ स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

21वीं सदी का युग यांत्रिकता का है। मनुष्य के पास इतना समय नहीं है कि वह प्राचीन समय से चले आ रहे रीति–रिवाज़ों, परम्पराओं एवं संस्कारों का निर्वाह विधिवत कर सके। इसी कारण ''आज संयुक्त परिवारों का विघटन तो हो ही रहा है साथ ही संबंधों में भी शिथिलता आ रही है। दाम्पत्य–जीवन संबंधी परंपरागत नैतिक मान्यताएँ खोखली होती जा रही हैं। प्रेम और विवाह जैसे संबंधों और संस्थाओं का स्वरूप भी बदल गया है।''[1] आज जिस प्रकार सामाजिक विषमताएँ बढ़ी हैं इसमें भारतीय पारिवारिक–व्यवस्था टूटकर बिखर गई है।

कात्यायनी ने 'पों' और चूँ'' कविता में पारिवारिक–सामाजिक संवेदना को अत्यन्त ही स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया है–

''यही हो सकता है

बेहतर
इन दिनों
कि वे हों कवि
और आप व्यंग्यकार''[2]

कहने का तात्पर्य है कि यदि दाम्पत्य–जीवन सुखमय व्यतीत करना है तो बेहतर है कि आपका कार्यक्षेत्र एक–दूसरे से अलग हो क्योंकि–

''एक–दूसरे के
आन्तरिक मामलों में अहस्तक्षेप से
बढ़ता है प्यार।
ऐसे ही चल सकती है
आज
आपसी सहयोग और समझदारी से
ज़िन्दगी।''[3]

उपर्युक्त पंक्तियों से वर्तमान स्थिति का पता चलता है कि लोगों में सहनशीलता नहीं रह गई है और प्यार व आपसी सद्भाव के स्थान पर 'अहं' इस कदर बढ़ गया है कि ज़रा–सी बात से दूरियाँ बढ़ जाती हैं और यहाँ तक कि सम्बन्ध–विच्छेद तक हो जाते हैं।

अनामिका 'अन्तःपुरम्' शीर्षक के अन्तर्गत कविता 'वृद्धाएँ धरती का नमक हैं' में वर्तमान पारिवारिक–स्थिति को अत्यन्त ही संवेदनशील रूप में व्यक्त करती हैं–

''वृद्धाएँ धरती का नमक हैं
किसी ने कहा था।
जो घर में हो कोई वृद्धा
खाना ज्यादा अच्छा पकता है
सजा–धजा रहता है घर का हर कमरा,
बच्चे ज्यादा अच्छा पलते हैं''[4]

उक्त पंक्तियों में जब कवयित्री ये सभी बातें कहती है कि जब कोई वृद्धा घर में हो तो खाना अच्छा बनता है, बच्चे अच्छे पलते हैं और पूरा घर जगमगाता रहता है तो यह सत्य ही है क्योंकि परिवार में जब बड़े रहते हैं तो उनका जीवनानुभव हर पल हमें मार्ग–प्रशस्त करता है। उन्हें जीवन का अनुभव और प्रत्येक उस चीज का अनुभव युवा–पीढ़ी से ज़्यादा होता है जिससे पारिवारिक जीवन सुखमय व्यतीत किया जा सके। 'बच्चे अच्छे से पलते हैं' से कहने का आशय–संस्कारों से है। बड़ों के घर में रहने से बच्चों में संस्कार आते हैं परन्तु वर्तमान स्थिति अत्यन्त दयनीय है।

बदलते परिवेश में समाज की आत्मीयता कहीं लुप्त हो गई है। महानगरीय सभ्यता में व्यक्ति आत्मकेन्द्रित हो गया है। अपने स्वार्थ के समक्ष उसे अन्य किसी के सुख–दुःख से कोई लेना–देना नहीं है। सभ्यता की कथित उन्नति के कारण सामाजिक ढाँचा बदल गया है, शहरों में भीड़ बढ़ गई है, जीवन में यांत्रिकता आ गई है परिणामतः सामाजिक सम्बन्ध बदल गए हैं।

नीलेश रघुवंशी ने 'अजनबी शहर' कविता में महानगरीय सभ्यता का यथार्थ चित्रण किया है–

''बहुत अजनबी है यह शहर
अजनबी शहर का हर पेड़ भी अजनबी–सा

अजनबी से कतराते से फूल
इस अजनबी से शहर में ढूँढती हूँ
अपने शहर–सी कोई गली।''[5]

मृदुल जोशी अपनी कविताओं के माध्यम से अत्यन्त ही संवेदनशील ढंग से जीवन की सच्चाई सामने रखती हैं और 'ये ज़िन्दगी शहर की' ऐसी ही सच्चाई उजागर करती कविता है–

''शहर की
लुहारी हवा के हाथों
घिसी–पिटी ज़िन्दगी
नयी बनी
घिसी–चमकी
कढ़ाई–सी हो गयी है''[6]

उक्त पंक्तियों में कवयित्री ने लुहार और कढ़ाई के माध्यम से शहरी जीवन की कठोर सच्चाई को उजागर किया है कि किस प्रकार शहरों की लुहारी हवा अर्थात् कठोर जीवन–शैली, जहाँ मानवीय संवेदनाएँ समाप्त हो चुकी हैं, जिसके प्रहार से कढ़ाही की भाँति आहत मानव–जीवन ऐसी जीवन–शैली जीने का आदि हो चुका है और समाप्त होते आत्मसम्मान और स्वाभिमान पर लिखती हैं–

''चोट–दर–चोट
परिचय
सिसकता टूटता
और चूर–चूर होकर
बिखर जाता है।''[7]

कहने का तात्पर्य यह है कि दिन–प्रतिदिन आहत होते रहने से मनुष्य का अपना अस्तित्व समाप्त होता चला जाता है।

समय के समस्त वैचारिक संघर्षों और भावनात्मक द्वन्द्वों से आत्मसाक्षात्कार कर कवि जब राजनीति के सही रूप को पहचान कविता–सृजन करता है तो उसकी कविता में प्राणों का समावेश होता है तभी वह कविता जीवन की कविता बनती है।

इस सदी के व्यक्ति ने राजनीति के इतने विविधि पक्षों का प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से साक्षात्कार कर लिया है कि मानवीय–जीवन इसकी दया से ग्रस्त हो चला है।

कात्यायनी 'सुसंस्कृत भद्र और जिम्मेदार नागरिक होने के बारे में कुछ उद्दंड गैरज़िम्मेदाराना विचार' कविता में भ्रष्ट राजनीतिक तंत्र में चापलूसी की अनिवार्यता पर व्यंग्य करती हैं–

''द्वन्द्वमुक्त सोच होगी द्वन्द्वमुक्त जीवन में
या सोच का द्वन्द्व मुक्त होगा
जीवन के द्वन्द्व से।
सत्ता के लिए होंगे हम
अहानिकर, विश्वसनीय
और अधिक समझदार हुए तो

सन्निकट, पुरस्करणीय''[8]

यहाँ कवयित्री ने अपने तीखे तेवरों के साथ व्यंग्य किया है कि जब हमारा द्वन्द्व समाप्त हो जाएगा अर्थात् जब हम कुछ सोचना समाप्त कर देंगे तो इस सत्ता के लिए निश्चित ही विश्वासपात्र बन जायेंगे और अहानिकर भी और यदि और अधिक उनके हितैषी बने तो उनके करीबी बनने के साथ–साथ पुरस्कृत भी कर ही दिये जायेंगे, यही है आज का राजनीतिक तन्त्र।

हमारे समाज का शोषित वर्ग विशेषतः श्रमिक और मजदूर वर्ग इनके अर्थात् राजनीतिक चोचलों के अभ्यस्त हो चुके हैं। उन्हें इन राजनीतिक दलों की धोखा देने की आदत का पता चल चुका है इसलिए अब ये इनकी चालबाज़ियों और झूठे वायदों से उदासीन हो चुके हैं। मृदुल जोशी 'ग़लत बयानी' कविता द्वारा श्रमिक–वर्ग की मनःस्थिति का वर्णन करती हैं–

''हुजूर
हमारी काँपती ठठरियों को
नहीं गरमा पाते
तुम्हारे ओजस्वी घोषणा–पत्र''[9]

उक्त पंक्तियों के माध्यम से कवयित्री उस वर्ग की ओर ध्यान दिलाने की कोशिश करती हैं जो आज भी अत्यन्त दयनीय स्थिति में जीवन व्यतीत करने को मजबूर हैं और चुनाव के दौरान की जाने वाली घोषणाएँ जो कि अब उनके काँपते शरीरों को अर्थात् उनके निर्वस्त्र शरीरों में निश्चिन्तता की गरमाहट देने में असमर्थ हो चुकी हैं।

वर्तमान राजनीति 'चलती का नाम गाड़ी' का पर्याय बन चुकी है। कुशलता, ज्ञान, विवेक की धज्जियाँ उड़ाती राजनीति में गुण्डागर्दी, असभ्यता के मानदण्ड चलते हैं। इस पर नीलेश रघुवंशी 'खोटे सिक्के' कविता में लिखती हैं–

''हार को कभी
किसी ने हार नहीं पहनाया
जीत को इतने हार पहनाए गए
कि खोटे सिक्के चलन में आ गए।''[10]

आज का मनुष्य घोर आर्थिक विपन्नता में जिए जा रहा है। हम ऐसे समय में जी रहे हैं जहाँ अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होता जा रहा है और मध्यवर्गीय व्यक्ति अपने लिए जीवनोपयोगी सुख–सुविधाओं को जुटाने में ही संघर्षरत रहता है। ''आज आम आदमी की प्रमुख समस्याएँ महँगाई, बेरोज़गारी, भुखमरी एवं निर्धनता आदि हैं, जिनसे वह प्रतिपल जूझ रहा है। साम्प्रतिक परिवेश में बेकारी–बेरोज़गारी की समस्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। शिक्षित रोजगार काम की तलाश में भटकने एवं अपना अस्तित्व तक समाप्त कर देने हेतु विवश हैं।''[11]

अनामिका भी 'चकमक पत्थर' कविता में बाल–मजदूरी पर अत्यन्त संवेदनीय विचार प्रस्तुत करती हैं–

''उसका खाता बस इतना है–
वह खाता है
धूँसर माता की कसम
और धंधे की
पेट में नहीं एक दाना गया है

अगरबत्तियाँ ले लो–दस की दो।''[12]

प्रस्तुत पंक्तियों में हमारे देश में व्याप्त आर्थिक–विषमता से द्वन्द्वग्रस्त कवयित्री ने एक बालक की स्थिति का वर्णन किया है जो अपने घर में चूल्हा जलाए रखने के लिए दर–दर की ठोकरें खाता फिरता है। हमारे समाज का यह वह रूप है जिसे हम अनदेखा कर देते हैं और वहीं दूसरी ओर वह बच्चा भूखा–प्यासा कसमें खाता अगरबत्तियाँ बेचने के लिए संघर्षरत है।

सविता सिंह किसानों की दयनीय स्थिति का अत्यन्त मार्मिक एवं कारुणिक चित्रण 'अन्त' कविता में करती हैं–

''कर्नाटक के एक अँधेरे गाँव में
जीवन का खेल समाप्त करने की तैयारी
कर रहा है किसान परिवार
जमीन पर चटाई डाली जा रही है
कटोरे में जहर घोला जा रहा है
एक शान्ति छा जाती है फिर हर तरफ
सिर्फ देह तड़पती है कुछ देर तक।''[13]

किसानों की वर्तमान स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। कृषि–प्रधान देश में कृषक मरने के लिये विवश है और इस देश का इससे बड़ा दुर्भाग्य नहीं हो सकता।

अच्छी नौकरी पाना प्रत्येक व्यक्ति का सपना होता है और कभी–कभी वह सपना ही रह जाता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति सही–गलत को न देखकर स्वयं का विकास देखता है। इसी स्थिति को कवयित्री नीलेश रघुवंशी ने 'स्वाँग' कविता में इस प्रकार व्यक्त किया है–

''एक साबुत आदमी नौकरी पाने के लिए
रचता है स्वाँग विकलांग होने का
दिखाता है वह पाँव के कटे अँगूठे को''[14]

पैसा कमाने के लिए लोग 'स्वाँग' करने में पारंगत होते जा रहे हैं। वैसे यह हमारे देश का दुर्भाग्य ही है कि आज के समय में भी व्यक्ति इस प्रकार धन अर्जित करने को मजबूर है।

आज व्यक्ति एक असुरक्षा के घेरे में जी रहा है। देश और दुनिया में फैले आतंक से उसकी शक्ति क्षीण–सी हो चुकी है। हिन्दू–मुस्लिम करने वाले धर्म के बर्बर सौदागार ईश्वर–अल्लाह को अपनी उँगलियों पर नचाते हैं और ऐसे में नुकसान केवल आम–नागरिकों का होता है। केवल उन्हीं की जीवन–शैली प्रभावित होती है। आज की कविता में तात्कालिक प्रश्नों और समस्याओं का साक्षात् करने की प्रवृत्ति उल्लेखनीय है।

कात्यायनी ने भय, आतंक व असुरक्षा को भली–भाँति देखा है क्योंकि वह स्वयं ऐसे आंदोलनों से जुड़ी रही हैं। उनकी कविता 'कहीं कोई आग' सहसा ही इन स्थितियों को रेखांकित कर देती है–

''बह रही है साँय–साँय हवा
रात है सुनसान, तिमिराच्छन्न
शीत का आतंक गहरा है।
घाटियाँ, मैदान, वन–प्रान्तर
धरी है सबने सजग चुप्पी

आहटें, कुछ आहटें हैं आस–पास।''[15]

उक्त पंक्तियों को पढ़ते ही देश व समाज की वस्तुस्थिति का आंकलन किया जा सकता है कि किस प्रकार हम भय, आतंक एवं असुरक्षा के शिकंजे में फँसे हैं।

सविता सिंह इस स्थिति को 'एक दृश्य स्वप्न सा' कविता में इस प्रकार अभिव्यक्त करती हैं–

''एक डाल पर सोई थी दूसरी डाल
एक टहनी से सटी लगी थी दूसरी
एक पत्ता ढँके था दूसरे को
सब बचाए हुए थे इस तरह खुद को
बचाकर दूसरों को
... यह दृश्य है जो अब सुरक्षित है प्रकृति में
बस उसके एक स्वप्न–सा।''[16]

कहने का तात्पर्य है कि प्रकृति ने जिस प्रकार पेड़–पौधों को जगह दी है उनका पालन–पोषण किया है। हम भी इसी प्रकृति की देन हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में कवयित्री ने प्रकृति के माध्यम से संप्रेषित करने का प्रयत्न किया है कि जिस प्रकार डाल एक–दूसरे से सटी होती है, पत्ते एक–दूसरे को ढंके रहते हैं और इस तरह वह स्वयं को अन्य खतरों से बचाये रहते हैं उसी प्रकार मनुष्य भी एक–दूसरे पर विश्वास कर एक–दूसरे की रक्षा कर सकने में सक्षम है परन्तु वास्तविकता कुछ और ही है यह विश्वास केवल प्रकृति तक ही सीमित रह गया है और मानव–प्रकृति में यह केवल एक स्वप्न–सा प्रतीत होता है क्योंकि आज मनुष्य अवसरवादिता का शिकार हो चुका है और कौन, कब, किसको धोखा दे दे, नहीं पता।

मृदुल जोशी अपनी कविताओं में त्रस्त मानव–मन को और उसके कारणों को भी अत्यन्त कुशलता से शब्दों में पिरोकर व्यक्त करती हैं और ऐसी ही एक और कविता 'दंगा' में आतंक को, उसके विकराल रूप को परिभाषित करते हुए लिखती हैं–

''वो सुप्त ज्वालामुखी
जो अचानक जागृत होकर
सामने बसा
शहर लील जाता है।''[17]

'ज्वालामुखी' शब्द सुनते ही विनाश का चित्र सामने आ जाता है। ऐसा चित्र सामने प्रकट होता है जिसमें से लावा फूट–फूटकर निकल रहा है और वह लावा धीरे–धीरे फैलता हुआ सब कुछ नष्ट करता चला जाता है। उसी प्रकार आतंक और उससे उत्पन्न स्थितियाँ भी हैं। अचानक से अपने विकराल रूप में प्रकट होता है और सारा शहर तबाह कर जाता है।

आज की भयावह स्थिति में जहाँ घर से निकलते समय नहीं पता क्या होना है। चारों ओर आतंकवादी गतिविधियों ने पैर पसारे हुए हैं। ऐसे समय में घृणा भी एक–दूसरे को मार देने के लिए काफी है और अनामिका एक सत्य घटना को 'सार्वजनिक हत्या : भगवान बाजार' कविता में लिखती हैं–

''एक अनाम ईर्ष्या की कटार
उसका भेद गई कलेजा–यह कौन कहे।''[18]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में साम्प्रदायिकता एक वैश्विक घटना बन गई है। साम्प्रदायिकता को केवल धर्म से जोड़कर परिभाषित नहीं किया जा सकता क्योंकि धर्म के नाम पर अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए सत्तासीन लोग धर्म का दुरुपयोग करते हैं।

आज की कविता में समाज में फैली इस साम्प्रदायिक–गंध को स्पष्ट रूप से महसूस किया जा सकता है कि किस प्रकार रुपयों के लालच के आगे धर्म घुटने टेक देता है और इसी कटु सत्य को कवयित्री साफ–साफ शब्दों में अपनी कविता में उजागर करते हुए कात्यायनी 'गुजरात–2002' कविता में लिखती हैं–

''इतिहास रचा यूँ जाता हैं
ज्यों हो हिटलर का अट्टाहास
यूँ धर्म चाकरी करता है
पूँजी करती वैभव–विलास।''[19]

धर्म के नाम पर साम्प्रदायिक दंगों व आतंक की कहानी सदियों से चली आ रही है और 21वीं सदी भी इससे अछूती न रही। धर्म के नाम पर हिन्दू–मुस्लिम झगड़े होते रहे हैं और नीलेश रघुवंशी ने इसी पर अपनी कविता 'दिखते हैं अब' लिखी है। इसमें उन्होंने धर्म की आड़ में फैलते आतंक की बर्बरता का घिनौना चेहरा प्रस्तुत किया है कि कैसे इंसानियत ख़त्म होती जा रही है–

''सईदा पकड़ लिया तुम्हें धर्मावलंबियों ने
पेट को काटकर, भर दिए जलते चिथड़े।
गर्भ के संग मारकर, गोद दिया माथे पर तुम्हारे 'ऊँ'
दिखते हैं अब खून के छींटे, इन्द्रधनुषी रंग से भरे गरबे में।''[20]

प्राचीनकाल से अब तक समय के साथ–साथ समाज की प्रत्येक व्यवस्था में परिवर्तन होता रहा है। कभी–कभी ये परिवर्तन सुखद तो कुछ इतने दुखद हो जाते हैं कि समाज की नींव हिल जाती है। ऐसे ही व्यवस्था–परिवर्तन में से एक है–'अराजकता'।

कात्यायनी 'तलाशी' कविता में भ्रष्ट प्रशासनिक अव्यवस्था का घिनौना चेहरा सामने लाने का प्रयत्न करती लिखती हैं कि किस प्रकार मासूम लोगों को जबरदस्ती प्रताड़ित किया जाता है। ''समाज का वर्ग जिस पर भ्रष्टाचार रोकने की ज़िम्मेदारी है वही भ्रष्टाचार को फैलाने का सर्वाधिक प्रयास करता है। आज सुरक्षाकर्मी से सामान्य जन को सर्वाधिक असुरक्षा रहती है। पुलिस किस व्यक्ति को झूठे मामले में फँसाकर आपको जेल भेज देगी, कुछ पता नहीं।''[21] उन्हें बागी बनने पर मजबूर कर दिया जाता है–

''गैरमामूली ढंग का मामूली आदमी है
यह शख़्स !
इस पर कड़ी निगरानी रक्खो,
इसके घर के इर्द–गिर्द
रॉ, आई0वी0 और स्टेट इंटेलिजेंस के
एजेंट तैनात कर दो
कहीं भी कुछ हो

इसे तुरन्त हिरासत में ले लो।''[21]

अनामिका की कविताएँ जीवन को अलग ढंग से देखते हुए सत्य को उजागर करने का प्रयास प्रतीत होती हैं। उनकी कविता 'आधार कार्ड' भी कुछ ऐसी ही है जिसमें वर्तमान के अंधकारमय जीवन का कटु सत्य अत्यन्त ही प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया गया है–

''एक जंगलराज पसरा था चारों तरफ''[22]

नीलेश रघुवंशी ने भी 'नई सदी' नामक कविता में इक्कीसवीं सदी में व्याप्त अराजकता, शासनहीनता को शब्दों में पिरोकर प्रस्तुत किया है–

''मरते जाना हर दिन बेगुनाहों का
हजार बरसों पीछे ढकेलने का षड़यन्त्र ! आखिर किया किसने ?
किसने ? किसने ढकेला जीवन के
बुनियादी हकों को हाशिए पर ?''[23]

निष्कर्ष –

21वीं सदी की कवयित्रियों ने जीवन–जगत में हो रहे परिवर्तनों चाहे वह पारिवारिक हो या सामाजिक, राजनैतिक हो या आर्थिक, सभी पर अपनी लेखनी द्वारा उनमें व्याप्त विषमताओं को पूरी दृढ़ता के साथ सार्थक अभिव्यक्ति दी है। समाज में व्याप्त साम्प्रदायिक्ता, आतंक और अराजकता पर भी तीखे़ अंदाज़ में अपनी वाणी को कविता के रूप में सशक्त स्वर दिए है और समाज को पुनर्विचार करने पर विवश कर दिया है। वर्तमान सदी की कवयित्रियों की रचनाओं में संवेदना, सामाजिक सरोकार एवं सृजनात्मक चिंतन उत्कृष्ट रूप में प्रस्तुत हुआ है जो कि साहित्य और समाज को नई दिशा प्रदान करने में सक्षम है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1- (डॉ0)अनिल के0राय अंकित,समकालीन कविता के तेवर, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन,7/31, अंसारी रोड, दरियागंज,नयी दिल्ली–110002,प्रथम संस्करण–2003,पृष्ठ–212

2- कात्यायनी,जादू नहीं कविता,वाणी प्रकाशन,21–ए,दरियागंज,नयी दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण–2002,पृष्ठ–33

3- कात्यायनी,जादू नहीं कविता,वाणी प्रकाशन,21–ए,दरियागंज,नयी दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण–2002,पृष्ठ–33

4- अनामिका,खुरदुरी हथेलियाँ,राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,7/31,अंसारी मार्ग, दरियागंज,नई दिल्ली–110002,पहला संस्करण–2005/पहली आवृत्ति–2009, पृष्ठ–48

5- नीलेश रघुवंशी,घर–निकासी,किताबघर प्रकाशन,4855–56/24,अंसारी रोड, दरियागंज,नयी दिल्ली–110002,पेपरबैक प्रथम संस्करण–2009, पृष्ठ–64

6- मृदुल जोशी,गुम हो गए अर्थ की तलाश में,सत्यम् पब्लिब्शिंग हाउस,एन–3/ 25,मोहन गार्डन,उत्तम नगर,नई दिल्ली–110059,प्रथम संस्करण–2007, पृष्ठ–14

7- मृदुल जोशी,गुम हो गए अर्थ की तलाश में,सत्यम् पब्लिब्शिंग हाउस,एन–3/25,मोहन गार्डन,उत्तम नगर,नई दिल्ली–110059,प्रथम संस्करण–2007, पृष्ठ–15

8- कात्यायनी,जादू नहीं कविता,वाणी प्रकाशन,21–ए,दरियागंज,नयी दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण–2002,पृष्ठ–164

9- मृदुल जोशी,समकालीन हिन्दी कविता में आम आदमी,क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, 28–शॉपिंग सैन्टर,करमपुरा,नई दिल्ली–110015,प्रथम संस्करण–2001, पृष्ठ–61

10- नीलेश रघुवंशी,खिड़की खुलने के बाद,किताबघर प्रकाशन,4855–56/24,अंसारी रोड, दरियागंज,नयी दिल्ली–110002,प्रथम संस्करण–2017, पृष्ठ–50

11- मृदुल जोशी,समकालीन हिन्दी कविता में आम आदमी,क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, 28–शॉपिंग सैन्टर,करमपुरा,नई दिल्ली–110015,प्रथम संस्करण–2001, पृष्ठ– 124–125

12- अनामिका,पचास कविताएँ(नयी सदी के लिए चयन),वाणी प्रकाशन,4695,21–ए, दरियागंज,नयी दिल्ली–110002,प्रथम संस्करण–2012, पृष्ठ–64–65
13- सविता सिंह,पचास कविताएँ(नयी सदी के लिए चयन),वाणी प्रकाशन,4695,21–ए, दरियागंज,नयी दिल्ली–110002,प्रथम संस्करण–2012, पृष्ठ–56
14- सविता सिंह,पचास कविताएँ(नयी सदी के लिए चयन),वाणी प्रकाशन,4695,21–ए, दरियागंज,नयी दिल्ली–110002,प्रथम संस्करण–2012, पृष्ठ–38
15- कात्यायनी,सात भाइयों के बीच चम्पा,परिकल्पना प्रकाशन,डी–68,निरालानगर, लखनऊ– 226020,प्रथम संस्करण–जनवरी,2008, पृष्ठ–99
16- सविता सिंह,नींद थी और रात थी,राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,7/31,अंसारी मार्ग,दरियागंज,नई दिल्ली–110002,पहला संस्करण–2005, पृष्ठ–59
17- मृदुल जोशी,गुम हो गए अर्थ की तलाश में,सत्यम् पब्लिशिंग हाउस,एन–3/25, मोहन गार्डन,उत्तम नगर,नई दिल्ली–110059,प्रथम संस्करण–2007, पृष्ठ–12
18- अनामिका,टोकरी में दिगन्त (थेरी गाथा : 2014),राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0,1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग,दरियागंज,नई दिल्ली–110002,पहला संस्करण–2015, पृष्ठ–91
19- कात्यायनी,राख–अँधेरे की बारिश में,परिकल्पना प्रकाशन,जनचेतना,डी–68,निरालानगर, लखनऊ–226020,प्रथम संस्करण–जनवरी, 2004, पृष्ठ–19
20- नीलेश रघुवंशी,पानी का स्वाद,किताबघर प्रकाशन,4855–56/24,अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली–110002,प्रथम संस्करण–2009, पृष्ठ–56
21- कात्यायनी,जादू नहीं कविता,वाणी प्रकाशन,21–ए,दरियागंज,नयी दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण–2002,पृष्ठ–161
22- अनामिका,टोकरी में दिगन्त (थेरी गाथा : 2014),राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0,1–बी, नेताजी सुभाष मार्ग,दरियागंज,नई दिल्ली–110002,पहला संस्करण–2015, पृष्ठ–143
23- नीलेश रघुवंशी,पानी का स्वाद,किताबघर प्रकाशन,4855–56/24,अंसारी रोड,दरियागंज, नयी दिल्ली–110002,प्रथम संस्करण–2009, पृष्ठ–61